नेहरू प्लेस के नज़ारे

राकेश

I

"क्या भाई साहब काम चाहिए? नौकरी चाहिए... अरे पैसा नहीं लगेगा शुरू में... अच्छा सुनो, बायो डाटा लाये हो ... एक बार मिल तो लो अंदर जा के ... मिलने में क्या लगता है?"

दोस्तों,

मैं 'पारस' की ओर से जब पहली बार नेहरू प्लेस में दाख़िल हुआ तो कुछ ऐसा ही नज़ारा देखने-सुनने को मिला। इस आदमी ने मुझे एक छोटी सी पर्ची पकड़ा दी जिस पर दो फ़ोन नंबरों के साथ - "कॉन्टैक्ट अंजू फॉर जॉब्स, स्पेस्यिलाइज्ड इन प्लेसमेंट ऑफ़ इंजिनियरिंग, एक्सपोर्ट प्रोफेसनल . .. " लिखा हुआ था

उससे बातचीत में उलझने के बजाय मैं आगे बढ़ गया और आस-पास टहलता रहा।

लंबे अंतराल के बाद मैं एक बार फिर आज फ़ील्ड-वर्क पर था। अपने मीडिया मार्केट वाले काम के तहत ये तीसरा वो बाज़ार था जिसे मैं खँगाल रहा था। दो साल पहले जब मैं आख़िरी बार इस बाज़ार में आया था तब से अब तक इस बाज़ार में काफ़ी कुछ बदल चुका था। पिछली बार जब मैंने इस बाज़ार में फेरी वालों और दुकानदारों को मोल-तोल करते और तरह-तरह की चीज़ें बेचते देखा ताो मुझे यह बाज़ार बहुत गरम मालूम पड़ा था। आज ऐसा नहीं लग रहा था। वैसे मैंने किसी से बातचीत तो नहीं की मगर कुछ दिनों पहले ही सुनने में आया था कि धर-पकड़ और निगरानी के चलते ज़्यादातर स्टॉल वालों ने धंधा छोड़ दिया या फिर ये जगह। दरअसल उनका क्या हुआ ये तो मैं नहीं कह सकता, लेकिन यह साफ़ दिख रहा था कि सॉफ़्टवेयर और गेम सी.डी. बेचने वाले वाले ठिकानों की तादादा

बेहद कम हो गयी है। किताबें, कपड़े बेचने वाले और फेरी वाले तक अपने रंग में नहीं थे। गिनती भर बची रह गयी दुकानों से ज़रूरत की चीज़ें ख़रीदी जा सकती थी, और दूसरी तरफ़ नयी उम्र के कुछ लड़के हाथों में लैमिनेट की हुई सॉफ़्टवेयरों की लिस्ट लिए आवाज़ें मार रहे थे, "हाँ कौन सा सॉफ़्टवेयर चाहिए ..., देख लो सर, एक बार लिस्ट तो देख लो"।

उनके काम के तरीक़े पर ग़ौर करना वाक़ई दिलचस्प होगा। मुझे ये भी लगता है, कि इनके काम का तरीक़ा भी चाँदनी चौक के साड़ी एजेंटों जैसा ही है। व्यापार और नेटवर्क की पड़ताल के लिए ये लोग महत्त्वपूर्ण स्रोत साबित हो सकते हैं और ध्यान रहे कि नेहरू प्लेस इलाक़े में मेरे शोधक्रम के दौरान ये दोनों सवाल ही मेरे ख़ास सवाल होंगे।

II

दोस्तों

आज शाम मेरी मुलाक़ात 'शर्मा कंप्यूटर लिमिटेड', 10 नेहरू प्लेस वाले प्रवीणाजी से हुई, शैलेन्द्र जौहरी जी की मेहरबानी से मैं प्रवीणजी की दुकान पर पहुँचा। भीड़भाड़ देखकर उन्होंने मुझे अगले दिन का समय दिया। पेश है अगले दिन उनके साथ कार में नेहरू प्लेस के रास्ते में उनसे बातचीत का एक संक्षिप्त ब्यौरा:

मैं उनके बताए मुताबिक़ सब्ज़ी मंडी स्टेशन दाख़िल हुआ और फिर उनके साथ बातचीत करता हुआ नेहरू प्लेस पहुँचा। बातचीत बेहद दिलचस्प रही। गन्नौर, सोनीपत के रहने वाले प्रवीणजी रोज़ सब्जी मंडी स्टेशन आते हैं, और यहाँ प्रतापपुर मेट्रो पार्किंग में खड़ी अपनी कार से नेहरू प्लेस जाते हैं। तयशुदा कार्यक्रम के मुताबिक़ मैं आठ बजकर पैंतालीस मिनट पर पार्किंग पहुँचकर वहाँ खड़ी एक-एक कार का नंबर देखे जा रहा था मगर बदकिस्मती से मैं प्रताप पुर की जगह पुलबंगश पर था और मैं उनकी कार को खोजता ही रह गया। अंत में सेल फ़ोन पर उनसे बात की और इस बार आज़ाद मार्केट के गुरूद्वारे पर मिलना तय हुआ। अब हम साथ थे और हमारी बातों का सिलसिला शुरू हुआ।

नेहरू प्लेस आने के पहले प्रवीन आढ़ती का काम करते थे। ये उनका पुश्तैनी धंधा है। मगर गन्नौर में रह कर काम करने में उनकी दिलचस्पी नहीं थी और नरेला अनाज मंडी आ कर उन्होंने यही काम शुरू किया। 6-7 सालों के बाद उनकों लगा कि इस काम में उनका दिल नहीं लग रहा। "मैं कुछ अलग हट के करना चाहता था," अपने हरियाणवी लहजे में उन्होंने कहा। जिसके बाद वज़ीरपुर इण्डस्ट्रियल एरिया के पास, लॉरेंस रोड पर ही एक दोस्त के साथ मिलकर अंग्रेज़ी दवाओं की एक दुकान खोली। पर कुछ गफ़लत के चलते ये काम ज़्यादा दिन तक नहीं चला पाया। उन्होंने ये काम भी छोड़ने का फ़ैसला कर लिया। इसके बाद वो नेहरू प्लेस में अपने बहनोई की दुकान पर मदद की गरज़ से रोज़ थोड़ा वक़्त देने लगे। 'कोई हाथ पकड़ने वाला होना चाहिए था, और मेरे जीजाजी थे नेहरू प्लेस में।' प्रवीण के जीजाजी की कंप्यूटर हार्डवेयर की दुकान थी। उन्होंने शुरू में 3 महीने तक रोज़ाना लगभग 3 घंटे यहीं बिताए। इस दौरान उन्हें हार्डवेयर, धंधे और जगह की समझ भी हो रही थी। और उन्होंने सन् 2000 में, 10,000 रुपए महीने किराए पर एक दुकान ले ली और दस लाख रुपये की शुरूआती पूंजी लगा कर अपना धंधा चालू किया।

यह वो दौर था जब कंप्यूटर का ज़ोर बस पकड़ना शुरू ही किया था। सीडी रॉम अभी भी नयी चीज़ थी, और उपयोक्ताओं के लिए कंप्यूटर स्क्रीन पर फ़िल्में और एलबम देखना एक नया तर्जुबा था। यानी कंप्यूटर बाज़ार अभी उफ़ान पर था। इसीलिए उस समय कम पूंजी लगा कर भी लोग आज से

कहीं ज़्यादा मुनाफ़ा कमा रहे थे। उन्होंने पूछा, "मालूम है ऐसा क्यों था? क्योंकि तब पूरे हिंदुस्तान से लोग हार्डवेयर के लिए यहीं आते थे। अब क्या है कि कंपनियों ने जगह-जगह वितरक खड़े कर दिए हैं, और यहीं से सारा कारोबार होता है।"

हर जगह वितरकों का धंधे का अपना हिसाब है। प्रवीण का मुनाफ़ा आज भी उतना ही है जितना 4-5 साल पहले था। जबकि पहले उनका महीने का कारोबार 10 लाख का था और आज ये 50 लाख का है। प्रवीण कहते हैं, "तब मैं रिलैक्स रहता था, मेहनत कम थी, लड़के भी 2-3 थे, और अब आपने देखा ही कि रात के आठ बजे भी कैसे बैण्ड बजी रहती है, 6-6 लड़के भी कम पड़ते हैं। और कमाई वही है। तब जितना घर ले जाता था, आज भी उतना ही ले जाता हूँ।"

"लोग अब ज़्यादा मालूमात रखते हैं। अख़बारों और टीवी में इश्तेहार देखते हैं। एक क्लिक करो और इंटरनेट आप को सब कुछ हाज़िर कर देता है। इस लिए अब ग्राहक को बेवकूफ़ नहीं बना सकते, लेकिन पहले कभी-कभी ये भी चल जाता था। अब तो लोग पहले से ही जाँच-पड़ताल कर के आते हैं।"

"सारे हार्डवेयर चीन से इम्पोर्ट/आयात हो के आ रहे हैं। नेहरू प्लेस पर इनके तमाम वितरक हैं। पीएच, एम पी एल, एविक, फ्लाइन, आइबॉल, इंटेक्स वग़ैरह जैसी कुछ छोटी कंपनियाँ चीन जाकर वहाँ बाज़ार का सर्वेक्षण करती हैं और वहीं तीसरे दर्जे का हार्डवेयर चुन कर उन पर अपना लेबल चस्पाँ कर हिन्दुस्तानी बाज़ार में अपने माल के तौर पर बेचती हैं। बड़े पैमाने पर यही हो रहा है। इसलिए मैं तो आपसे यही कहूँगा कि आपको मीडिया मार्केट पर रिसर्च करना है तो आप चीन जाओ असली माल तो वहीं मिलेगा।"

लेकिन नेहरू प्लेस की ख़ास बात यह है कि यहाँ आपको गारंटी मिलती है, देश के दूसरे छोटे हिस्सों में आप कहीं ऐसा सोच भी नहीं सकते। पानीपत में भी इनकी एक दुकान है, जहाँ से वे पानीपत, सोनीपत, यमुना नगर और आस-पास के दूसरे हिस्सों के ग्राहकों को आपूर्ती करते हैं।

नेहरू प्लेस का दफ़्तर और गोदाम स्थानीय और आस-पास के इलाक़ों से आने वाले ग्राहकों के लिए है। वास्तव में, नेहरू प्लेस में बहुत कम ही दुकानें पूरे तौर पर 'हार्डवेयर शॉप' कहीं जा सकती हैं। ज़्यादातर दुकानें 4-5 या 10 जिंसी आइटमों के स्टॉकिस्टों की है। अलावा इसके सारा कार्यव्यापार 'छोटी लाइन' (इंटरकॉम) के ज़रिए होता है।

ऐसी छोटी कंपनियाँ जो चीन से लाया हुआ माल अपना लेबल लगा कर बेचती हैं, वास्तव में, कुछ हद तक स्थायित्व हासिल कर चुकी हैं। अब लोगों ने इन पर भरोसा करना शुरू कर दिया है, और "उन्होंने थोड़ी-बहुत "ब्रैण्ड इज़्ज़त भी कमा ली है।"

बीते दिनों को याद करते हुए प्रवीण कहते हैं, "अपना धंधा शुरू करने के लिए बहुत ज़्यादा बड़ी पूंजी की ज़रूरत नहीं होती। सिर्फ़ चौकस और ईमानदार रहना पड़ता है। ईमानदारी का मतलब ये कि ग्राहक को बेवकूफ़ मत बनाइए वैसे भी नेहरू प्लेस में इसकी गुंजाइश नहीं है।" जैसे ही कोई ऐसा काम करता है, तो ग्राहकों के साथ-साथ दुकानदारों (यानी स्टॉकिस्टों) के बीच भी उसकी छवि ख़राब हो जाती है। आप अछूत समझे जाते हैं और कोई भी आपके साथ धंधा नहीं करना चाहता है। इस तरह धंधे का प्रवीण का विचार ईमानदारी और भरोसे के उसूल पर अधारित है। इस व्यापार की एक दूसरी बड़ी ख़ासियत ये है कि विनिमय का एक भारी हिस्सा उधार पर चलता है और इसमें 'छोटी लाइन' की काफ़ी बड़ी भूमिका होती है। आइये अब इसकी भी एक झलक लेते चलते हैं:

मैं प्रवीण के सामने बैठा हूँ। मुझसे बातें हो रही हैं, और ग्राहकों की पूछताछ का जवाब देते, फ़ोन उठाते (कभी-कभी तो चारो फ़ोन एक साथ सँभाले) वो और कई कामों में भी भिड़े हुए हैं। सैमसंग-

यूएसबी की-बोर्ड माँग रहा एक शख़्स अंदर दाख़िल होता है। अगले केबिन में ग्राहकों को डील कर रहे अपने कर्मचारियों को उन्होंने अवाज़ दी, "नरेन्द्र अपने पास यूएसबी की-बोर्ड है" जवाब आया 'नहीं'।

इसके बाद उन्होंने 3-4 अंको का एक नंबर डॉयल किया, और पूछा, "मैडम, अपने पास सैमसंग यूएसबी की-बोर्ड है? क्या रेट है? साढ़े सात! कुछ ऊँचा हो गया मैडम। नहीं ना मैडम, सात का लगा लो ना ... , अरे नहीं मैडम, हमें नेहरू प्लेस छुड़वाओगे क्या ... , अच्छा लड़के को भेजता हूँ, सात बीस। पर्ची बनवा के भेज देना।

दूसरा उदाहरण :

तारीख़ 20 जनवरी 06, सुबह के 10 बजे। उनके साथ अभी-अभी उनके दफ़्तर पहुँचकर मैं एक कुर्सी पर आराम की मुद्रा में बैठ गया हूँ। उन्होंने ख़रीद की पर्चियों का मिलान करना शुरू कर दिया।

इसी बीच साथ की मेज़ पर बैठे, डायरी और अपना झोला संभालते शख़्स ने पूछा, "सर, यूएसबी की-बोर्ड रख लिया है, क्लिक माऊस वाला ब्रॉशर भी रख लिया, और क्या रखूँ?" प्रवीणजी ने कहा, "इंटेक्स का नया वाला हेडफ़ोन भी रख लो।" फिर उस शख़्स ने किसी उत्पाद के दाम को लेकर दरियाफ़्त की जिसे उसने अपने झोले में प्रचार (प्रमोशन) के लिए रखा था। प्रवीण ने कंप्यूटर पर कुछ खोजबीन की और फिर कहा, "750, और अगर थोक में हो तो 745, 46, 47 ... मतलब 45 से 50 के बीच में दे सकते हो।" 10-15 मिनट तक यूँ ही चलता रहा जब तक वो शख़्स चला नहीं गया।

इसके बाद मैंने उनसे पूछा, 'वह कहाँ जा रहा है?' उन्होंने जवाब दिया "नेहरू प्लेस में ही दुकानों पर घूम-घूम कर अपने प्रॉडक्ट के बारे में बताएगा।" अब ये आदमी शाम सात बजे के बाद दफ़्तर लौटेगा। प्रवीणजी कहते हैं कि ये बिक्री का एक नियमित और सबसे कारगर तरीक़ा है।

और कम से कम उनका धंधा ऐसे ही चलता है। अपने दफ़्तर में दाख़िल होने के साथ ही वो पिछले दिन के ख़रीद की एक-एक पर्ची को ग़ौर से देखते हैं और फिर खाते से इसका मिलान करने के बाद अपने कंप्यूटर पर वे यह सारा विवरण दर्ज करते हैं।

कंप्यूटर की दुनिया में हो रहा विकास और इस से जुड़ी नयी सूचनाएँ, बक़ौल प्रवीण (सेल्स रीप्रेज़ेन्टेटिवों) बिक्री - प्रतिनिधियों और ई-मेल के ज़रिए उन तक आती हैं। हर व्यापारी का कम से कम एक प्रतिनिधि तो ऐसा होता ही है जो नेहरू प्लेस में तमाम दुकानदारों के पास जा-जा कर उनको अपना नया माल दिखाता है। कई बार थोक-व्यापारियों (स्टॉकिस्टों) का मुनाफ़ा इससे बढ़ जाता है।

मैंने उनसे पूछा 'आपके पास नियमित इंटरनेट कनेक्शन तो होगा ही और आप नेट पर भी काफ़ी वक़्त देते होंगे?' उन्होंने कहा, "कनेक्शन तो है, लेकिन टाइम कहाँ है अपने पास। आपने देखा ही क्या हालत रहती है। हम तो फ़ोन पर ही जानकारी ले लेवे हैं। जैसे कोई क्लाइन्ट आ कर किसी नयी चीज़ के बारे में पूछता है, मैं उसे बीठा लेता हूँ, और छोटी लाइन पर पता कर लेता हूँ। दो-चार दुकानों में पूछने के बाद हर चीज़ और रेट की पूरी-पूरी जानकारी मिल जाती है। ग्राहक को बता देता हूँ। राज़ी हुआ तो लड़का भेज दिया नहीं तो वो अपने घर और मैं अपने घर।"

एक दूसरा दिलचस्प चलन ये है कि ढेर सारे स्टॉकिस्ट केवल ख़रीदारी के लिए ही 15-20 हज़ार रुपए मासिक किराया देते हैं, 20-25 हज़ार कर्मचारियों पर ख़र्च करते हैं और 4-5 हज़ार दफ़्तर का ख़र्च भी हो जाता है। वितरण और बिक्री के लिए इनके कई सारे दफ़्तर अलग-अलग शहरों में होते हैं। अपने ग्राहकों से कमाई करने के लिए वहाँ इनका पूरा एक तंत्र होता है।

अभी बस इतना ही। अगली बार मैं मंगलवार को नेहरू प्लेस जा रहा हूँ। इस बीच हर तरह के सुझाव और सलाहों का स्वागत है।

सलाम

III

थर्ड डाइमेन्शन मल्टीमीडिया, नेहरू प्लेस के मोहतरम अमीन साहब से हुई बातचीत के सार की पहली खेप प्रस्तुत है :

अमीन साहब 1994 में नेहरू प्लेस आए। उनका कहना है कि नेहरू प्लेस में सूचना तकनीक (आईटी) व्यापार की शुरुआत का भी यही दौर था। कंप्यूटर साइंस का छात्र होने के चलते उन्हें यह क्षेत्र काफ़ी रुचिकर लगा और, उस वक़्त मुनाफ़ा भी ज़बर्दस्त था बस इस सब के चलते ही वो नेहरू प्लेस आ पहुँचे। अमीन साहब के अनुसार कंप्यूटर का धंधा उस ज़माने में एक तरह का सफ़ेद पोश धंधा था। विकसित तकनीक के चलते लोग धड़ाधड़ इसकी तरफ़ खींचे आ रहे थे।

आज वो कई क़िस्मों के सॉफ़्टवेयर और सीडियों का काम करते हैं, ख़ासतौर से स्कूली पाठ्यक्रम संबंधी सीडी का। पहले-पहल उन्होंने ही नेहरू प्लेस में मल्टीमीडिया का काम शुरु किया। वे बताते हैं, "मल्टीमीडिया नयी तकनीक थी, और मल्टीमीडिया हार्डवेयर में ही मेरा स्पेशलाइज़ेशन था। हमने साउंड कार्ड, सीडी ड्राइव्स और ऐसे ही दूसरे जिंसों का काम शुरू किया। यहाँ के लिए ये चीज़ें नयी थीं, इसलिए इनकी माँग भी ख़ूब थी। दूर-दूर से लोग इन चीज़ों के लिए नेहरू प्लेस आया करते थे।"

"दरअसल, व्यापार की हमारी रणनीति दूसरों से अलग है। हमें नयी तकनीक और नयी चीज़ों की ओर मुड़ने में वक़्त नहीं लगता। जैसे ही कोई तकनीक लोकप्रिय और सर्वसुलभ बन जाती है, ख़ुद-ब-ख़ुद उसकी माँग कम हो जाया करती है। ... कोई भी शख़्स जो किसी ख़ास उद्यम से जुड़ा होता है, उस क्षेत्र में हो रहे तमाम बदलावों से वाक़िफ़ होता है। जैसे ही कोई नयी चीज़ आती है वो नेहरू प्लेस में डीलरों के बीच बातचीत का मुद्दा हो जाती है। मिसाल के तौर पर, जब मैं नेहरू प्लेस आया तब सीडी ड्राइव आमतौर पर ख़रीद का हिस्सा नहीं होता था। लोग पर्सनल कंप्यूटर से अलग इसकी ख़रीद करते थे। इसके बाद आए मल्टीमीडिया कार्ड और टी.वी. ट्यूनर कार्ड। आज जिस तरह से एमपेग फ़िल्में आप सीधे अपने कंप्यूटर पर देख सकते हैं, पहले ऐसा नहीं था। अगर कोई 486 या पेंटियम-I पर फ़िल्में देखना चाहता तो उसको एमपेग कार्ड अलग से ख़रीदना पड़ता था। कहने का मतलब ये कि अगर आप इस उद्योग जगत में हैं तो आपको अपने आप पता लग जाएगा कि सबसे नया क्या आ रहा है।"

"अगर आप लेन-देन देखें तो आप को पता लगेगा कि टर्न-ओवर तो बढ़ गया है लेकिन मुनाफ़ा पहले से बहुत कम हो गया है। पहले एक कंप्यूटर पर 10-15000 /- रुपए बचते थे, आज अगर 500 कंप्यूटर बेचेंगे तो भी एक कंप्यूटर पर 500/- से ज़्यादा नहीं बचते। इसीलिए मैं कह रहा हूँ कि हार्डवेयर के धंधे में तो मुनाफ़ा नहीं रहा। सॉफ़्टवेयर की बात करें तो, उस वक़्त जब कम्पटीशन बहुत ज़्यादा था सॉफ़्टवेयर के धंधे पर नेहरू प्लेस में कुछ लोगों का इज़ारा था। अब तो हालात बिल्कुल बदल गए हैं। पाइरेसी के चलते अब तो कोई भी सॉफ़्टवेयर कहीं भी मिल जाता है। आपको पता है सॉफ़्टवेयर पाइरेसी कितना आसान है। बस आपके पास सीडी ड्राईव और एक कंप्यूटर होना चाहिए। खाली सीडी महज़ 2 से 5 रुपये में मिल जाती है। अब तो छापा पड़ने का भी ख़तरा नहीं रहा क्योंकि नकली सीडी गोदाम में रखने की ज़रूरत ही नहीं रही। जैसे ही किसी ग्राहक ने कोई सीडी माँगी आपने तुरन्त वो सीडी 'बर्न' कर के उसे पकड़ा दिया। कोई भी पाँच रुपये लगा कर 50-100 रुपए तक बना सकता है। अब अगर कोई किताब की पाइरेसी करना चाहे तो उसको जोखिम उठाना पड़ेगा। प्रिंटिंग-प्रेस लगाना होगा, ज़िल्दसाजी के लिए जिल्दसाज़ रखना पड़ेगा, काग़ज़, छपाई जैसी चीज़ों में भी पैसे लगाने पड़ेंगे, फिर एक गोदाम होगा। और आपको मालूम है 'स्टॉकिंग' कितना जोखिम का काम है। कभी भी रेड (छापा) पड़ जाए तो अपनी ज़मानत कराते घूमो। ऐसे में हमारी कोशिश तो अपने ग्राहकों को सस्ता और क़ानूनन असल सॉफ़्टवेयर उपलब्ध कराने की रहती है। हम तो कस्टमर को पाइरेटेड सॉफ़्टवेयर से बचाने के

लिए अपना मुनाफ़ा तक छोड़ने को तैयार रहते हैं। लेकिन सरकार की पॉलिसी का क्या कर सकते हैं? सरकार ने इस बजट में एक्साइज़ ड्यूटी (कर) बढ़ा दिया है। अब हमें भी दाम बढ़ाने पड़ेंगे। और अगर दाम बेढ़ेंगे तो कस्टमर भी पाइरेटेड सॉफ़्टवेयर ख़रीदने पर मजबूर होंगे।"

"पहले नेहरू प्लेस ख़ास बाज़ार होता था। उन दिनों धंधा भी उतना नहीं था। माँग कम होने के चलते कंपनियाँ भी ज़्यादा आयात नहीं करती थीं। आज माँग बढ़ने से कंपनियों के लिए भी काम बढ़ गया है। पहले नेहरू प्लेस नैशनल कैपिटल रीजन और आस-पास के राज्यों की माँग पूरी किया करता था। पंजाब, जम्मू-कश्मीर, हिमाचल, राजस्थान, उत्तर प्रदेश से लोग यहाँ आया करते थे। शनिवार सबसे ज़्यादा व्यस्त दिन होता था। उन दिनों शनिवार की बिक्री हफ़्ते के बाक़ी के 5 दिनों की बिक्री से भी ज़्यादा होती थी। अब तो सब कुछ बदल गया है। दिल्ली में 100 पीस बेचने पर भी कंपनी वही 'रेट' देती, है जो जम्मू में 25 पीस के लिए दिया करती है। क्योंकि अब उतनी खपत ही नहीं है। कंपनियों की बढ़ती तो है लेकिन नेहरू प्लेस के डीलरों को अस्तित्व की लड़ाई लड़नी पड़ रही है। क्योंकि बाज़ार का अपना एक दायरा होता है। पहले भी ख़रीदार जब यहाँ ख़रीददारी करता था तो उसके ज़हन में ये बात साफ़ होती थी कि उसे कौन-सी चीज़ें कहाँ बेचनी हैं। बाज़ार का दायरा जब सीमित हो गया है, तो ज़ाहिर सी बात है बिक्री भी कम हो जाएगी। अरे भाई, अब वो बेचेंगे कहाँ? कंपनी तो अभी भी यही चाहेगी की डीलर पहले जितना ही खेप उठाया करे। लेकिन ये भी तो बताओ कि बाज़ार ही नहीं होगा तो कौन उतना ख़रीदेगा। आपको मालूम है तब क्या होता है? क़ीमतें कम कर दी जाती हैं। जबसे बिक्री कम हुई मारामारी बढ़ गयी है। डीलरों ने भी क़ीमतें कम करना शुरू किया और कमती मुनाफ़े पर बेचना शुरू किया। नतीजा, हर महीने सुनने को मिलेगा कि फ़लाँ डीलर इतने-इतने पैसे लेकर ग़ायब हो गया। हर दो महीने बाद वही क़िस्सा है।"

"मैं समझता हूँ नेहरू प्लेस पर दुकानों का किराया एशिया भर में सबसे ज़्यादा है। आपको पता है, नीचे जो ये छोटी-छोटी पेटियों पर लोग पाइरेटेड माल बेचते हैं, ये भी महीने का 1500/- रुपए देते हैं। मौक़े की जगह पर पेटी रखनी है तो इतना किराया देना ही पड़ता है। पहली मंज़िल पर '4/6' का केबिन लेने में 25-30,000/- महीने का ख़र्चा है।

"...पहली मंज़िल ज़्यादातर किराए पर है। ये दुकानदारों की अपनी ज़ायदाद नहीं है। इस बजाज हाऊस को बनावाने के बाद उन्होंने इसे बेच दिया। किसी ने दो फ़्लैट (कमरे) ख़रीदे तो किसी ने तीन। मैं ख़ुद तीसरी मंज़िल पर 17000 रुपए हर महीने किराए के देता हूँ। इस दफ़्तर को देख रहे हैं न, आपको नहीं लगता कि 17000 इसके लिए बहुत ज़्यादा है? 2000/- रुपये देख-रेख में भी लगते हैं।"

"जहाँ तक चीज़ों के निर्माण का सवाल है, तो कोई भी सारी चीज़ें नहीं बना सकता, क्योंकि ये तो बहुत बड़ा उद्योग है। बड़ी-बड़ी बहुराष्ट्रीय कंपनियों तक को तमाम चीज़ों के लिए दूसरों का मुँह ताकना पड़ता है। देखिए, सीडी तो बस एक 'स्टोरेज' माध्यम है। असली चीज़ तो इसके भीतर है। सीडी के भीतर क्या होता है? कुछ लोग शैक्षणिक, मनोरंजन से जुड़ी, संदर्भ-संबन्धी, और कुछ ऐप्लिकेशन सॉफ़्टवेयरों से जुड़ी सीडी बनाते हैं। मेरे कहने का मतलब यह है कि हर कंपनी अपने ख़ास काम पर ध्यान देती और करती हैं। मैं खेल (गेम्स) बनाता हूँ। मेरे पास अपने कुछ खेल हैं। मैं शैक्षणिक सीडी नहीं बनाता क्योंकि वो दक्षता मेरे पास नहीं है, किसी और के पास है। खेलों में भी तमाम चीज़ें ऐसी है जिन्हें ख़ुद न बना कर मैं ख़ुद बाहर से इसे ख़रीदता हूँ। और मेरे पास दूसरों की बनायी शैक्षाणिक सामग्री के वितरण का अधिकार भी है। अब कोई भी सारी चीज़ें ख़ुद से तो नहीं बना सकता।"

"जहाँ तक नेहरू प्लेस में आये बदलावों का सवाल है मैं सिर्फ़ इतना ही कहूँगा की जगह तो वही है। हाँ, कुछ चीज़ें ज़रूर बदल गई हैं, जैसे: 1998-2000 के लगभग बिक्री-पटल (काउन्टर) लगने शुरू हुए थे। अब तो उतना ज़ोर नहीं है। सरकार ने नेहरू प्लेस का सौन्दर्यीकरण और बड़ाई इस मक़सद से

शुरू की थी ताकि लोगों को नेहरू प्लेस की ओर आकर्षित किया जा सके। धंधे के नज़रिए से देखें, तो आप पाएँगे कि उस समय नेहरू प्लेस में महज़ कुछेक खिलाड़ी ही थे, कारोबार भी थोड़ा था लेकिन मुनाफ़ा बहुत था। आज खिलाड़ी तो ढ़ेरों है, कारोबार काफ़ी बढ गया है, लेकिन मुनाफ़ा सिमट गया है।"

"जहाँ तक "सेकेण्ड-हैण्ड" कंप्यूटर का सवाल है, तो आप कंप्यूटर की किसी भी चीज़ को "सेकण्ड-हैण्ड" नहीं कह सकते। आज आप जिसे सेकेण्ड-हैण्ड कहते हैं, दरअसल वो "लुप्तप्राय" हैं। सेकेण्ड-हैण्ड का मतलब है कि उस सेकेण्ड-हैण्ड का फ़र्स्ट-हैण्ड भी उसी वक़्त बाज़ार में हो। उदाहरण के लिए, एक इस्तेमाल की गयी मारूति 800 गाड़ी है, लेकिन एक नयी मारूती 800 भी है। जबकि लुप्तप्राय का मतलब यह है कि अब उस उत्पाद का उत्पादन ही बंद हो गया है। कंप्यूटर में कुछ भी "सेकेण्ड-हैण्ड" नहीं होता। मान लीजिए की मेरे पास पेंटियम 4 कंप्यूटर है। मैं इसे क्यों बेचूँगा? मैं तभी इसे बेचूँगा न जब पेंटियम 5 आ जाएगा। फिर मैं पूछूँगा कि इसका क्या दोगो? ठीक है, इसके अपग्रेडेशन में जो 500-1000 लगे वो ले लो और मुझे सबसे नए एक्सेसरीज़ दे दो? इसलिए तकनीकी के मामले में कुछ भी "सैकेण्ड हैण्ड" नहीं कहलाता। कभी भी नहीं। अब आप पूछेंगे कि लुप्तप्राय चीज़ों का क्या होता है? देखिए, खाता बनाने वाले लोग हैं, और बच्चों के लिए कंप्यूटर तलाश रहे लोग हैं वो ऐसे कंप्यूटरों को ख़रीद लेते है। या कोई-कोई ऐसा भी है जो अब भी 486 पर काम कर रहा है, और मान लीजिए उसे कुछ दिक़्क़त आ गयी तो वो नेहरू प्लेस आ कर अपने ज़रूरत की सामग्री ले जाता है। ऐसे लोग इन चीज़ों को इसलिए ले जाते हैं क्योंकि वो नयी चीज़ें इस्तेमाल नहीं करना चाहते। नयी चीज़ों की उनके लिए कुछ ख़ास उपयोगिता नहीं होती। दूसरे, मरम्मत में भी इनकी ज़रूरत पड़ती है।"

"मैं ख़ास तौर से मॉल्स की दुकानों और दिल्ली, मुम्बई, चेन्नई, कोलकाता और चंडीगढ़ की मशहूर दुकानों के लिए सप्लाई करता हूँ। मेरा माल समूचे हिन्दुस्तान में जाता है, बिहार तक मेरी सप्लाई होती है। अहम बात ये है कि आपके पास ख़ास क्या है? नया क्या है? तो ही आप सप्लाई कर सकते हैं।"

"इंटरनेट ने इस धंधे को एक ही साथ मुश्किल और आसान दोनों बना दिया है। आसान इस लिए क्योंकि हर दूसरे दिन आपको पता लग जाता है कि सबसे नई तकनीकी कौन सी है, नया क्या आ रहा है, और इसे आप कहाँ से हासिल कर सकते हैं। मुश्किल यूँ कि ग्राहकों को भी ये तमाम जानकारियाँ स्रोत और दाम समेत रहती है। ज़्यादातर ग्राहक यहाँ गूगल खोज के बाद आते हैं और ऐसे में आप उन्हें बेवकूफ़ नहीं बना सकते। आप उनसे एक रुपया ज़्यादा नहीं ऐंठ सकते। ज़ाहिर है, मुनाफ़ा कम ही होगा। इंटरनेट सूचना का सबसे प्रमुख माध्यम है। आप उन कंपनियों की मेलिंग लिस्ट पर होते हैं, जिनके साथ आप का कामकाज होता है। इसलिए, जैसे ही कोई नयी चीज़ आती है, ख़ुद-ब-ख़ुद उनके सूचक-पत्रों और पैकेटों के ज़रिए सूचना मिल जाया करती है। केवल डीलरों के साथ ही ऐसा नहीं होता, बल्कि ग्राहकों को भी तमाम बेवसाइटों के ज़रिए सूचनाएँ मिल जाया करती हैं। याहू और रेडिफ़ जैसी आम वेबसाइटों पर भी आप नए उत्पादों के इश्तेहार आसानी से देख सकते हैं। इसलिए, उपयोक्ता भी ख़ूब जानकार होता है।"

अब, मैं इस पोस्ट को यहीं समाप्त कर रहा हूँ। कुछ हिस्सा अभी भी बचा रहता है, जिसे मैं अगले हफ़्ते भेजूँगा। हाँ, एक एक तजुर्बा ज़रूर शेयर करना चाहूँगा। जब मैंने इन जनाब से इस साक्षात्कार के लिए अनुरोध किया तो उन्होंने मेरे काम, संगठन और बातचीत का मक़सद जानना चाहा। मैंने उन्हें अपना विज़िटिंग कार्ड दिया और अपने शोध के बारे में बताया। फिर उन्होंने ब्राउज़र पर www.sarai.net टाइप किया। एक नज़र हमारी वेबसाइट को देखा, और बोले, "ठीक है, जो कुछ आप जानना चाहते हो पूछो, मगर देखो, ये हमारा धंधा है, इसलिए मेरे समय का भी कुछ हिसाब रखना।"